Introduction

कबीर, "दादू दयाल, अखा की साखियों का तुलनात्मक अध्ययन"

शोधप्रबंध की संक्षिप्त रूपरेखा

परमात्मा एक अलौकिक भाषा द्वारा अवर्णनीय कभी न खत्म होनेवाली एक किताब है। वेद,कुरान,गुरूग्रंथ साहब आदि धर्मग्रंथ परमात्मा की किताब के बहुत से पृष्ठ है, जो लिखे जा चुके हैं। तथा इसी प्रकार और अनगिनत पृष्ठ लिखे जायेंगें।

यदि हम संसार के सारे धर्मग्रंथों की व्याख्या करते हैं तो पता चलता हैकि उनमें जो सच्चाइयॉ हैं वे उनधर्मों के महापुरूषों का निजी अनुभवों की निचोड़ हैं। सभी धार्मिक पुस्तकों में इस आत्मिक जीवन को जागृत करने और महाचेतन सत्य के गुणों कोअपने अन्दर धारण करने के साधनों का उल्लेख है।

धर्मपुस्तकें अलग–अलग काल में लिखी गयीं और अपने–अपने समय के अनुसार उनमें पूजा के तरीके भिन्न–भिन्न बताये गये।उन सबका ध्येय भी एक ही है।हर एक धर्म का मूल उद्देश्य एक ही है।फिर भी प्रत्येक धर्मों के पृथक स्वरूप,कर्मकाण्ड आदि में हम भिन्नता पाते हैं।परमात्मा की दृष्टि में बाहरी आडम्बर कियाकाण्डों का कोई महत्व नहीं। सत्य सभी धर्मों में एक ही है।सभी धर्मों का मूल उद्देश्य परमात्मा का साक्षात्कार करना है।

सच्चाइयॉं क्या धार्मिक अथवा नैतिक या आत्मिक , मनुष्य के लिये सब धर्मो में एक – सी ही बतलाई गयी है । सबके अन्दर इसी बात का मुख्य उपदेश है कि मनुष्य शुभ कर्म करे , और उसी में समा जाय । सब धर्मो का मूल ध्येय परमात्मा से साक्षात्कार है । वेद कहते है , " सब मिलकर उस परमात्मा की पूजा करो ।" 1

1:– अथर्व वेद, 3–30–5

1586 ई0 में चालीस दिनों तक अकबर ने दादू के साथ धर्म के विषय पर बातचीत की । कहा जाता है कि इस अवसर पर मुसलमान ,जैन तथा अन्य धर्मों के महात्मा भी इस वार्ता में शामिल हुए ।दादू के ज्ञान से भरे शब्दों से आश्चर्य चकित हो विद्वानों और महात्माओं नें उनसे जानना चाहा कि किस मन्दिर में परमेश्वर की आराधना करते हैं, दादू नें अपने शरीर को ही हरि –मन्दिर बताया । और स्पष्ट किया कि अन्तर्मुखी पूजा ही वास्तविक पूजा है :

दादू भीतर पैसि करि,घट कै जडै कपाट।
साई की सेवा करै , दादू अविगत घाट।। 1

* * *

आतम मॉहि राम है, पूजा ताकी होइ।
सेवा बंदन आरती,सांध करै सब कोइ ।। 2

दादू की तरह कबीर के भी बचन मिलते–जुलते हैं। यदि हम कबीर की साखियों में झांक कर देखें तो हमे यही मर्म दिखायी पड़ता है :

मोको कहॉ ढूढ़ो बंदे, मैं तो तेरे पास में।
ना मैं देवल ना मैंमस्जिद ,ना मैं काबे कैलास में।।
ना तौ कौनो क्रिया कर्म में, नहीं जोग बैराग में।
कहैं कबीर सुना भाई साधो, सब स्वांसों की स्वांस में।।3

इसी प्रकार यदि हम अखा की साखियों का अवलोकन करें तो हमें ज्ञात होता है कि दादू और कबीर की तरह अखा में भी वही स्वर मुखरित हुआ है –

आतमा तीरथे न्हाव ,रे मानवी ! तीरथराज एहेंवु वेद – वचने ,
भरमे भ्रमण करे, बेसते उगरे, का प्रतीत आवे तु ने वाणी –वचने ? 4

1– दादू दयाल की बानी , भाग –1 , परचा –256 , बलबेडेयर प्रेस , इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित ,सन् 1973–74 । 2 – वही परचा , 262

3– कबीर साहब की शब्दावली , भाग –1 , चितावनी और उपदेश , मिश्रित ,शब्द –6 , पृ0 90–91 , बलबेडेयर प्रेस, इलाहावाद द्वारा प्रकाशित , सन् 1981 पृ0 90 –91

4– अखानी काव्य कृतिओ , खंड –2 , पद –87 , संपादक –डॉ0 शिवलाल जेसलपुरा , स्वाति प्रेस , अहमदावाद –7 द्वारा प्रकाशित, सन् 1988

विश्व की आध्यात्मिक विचारधारा मूलतः एक सूत्र में आबद्ध है, और यह अक्षुण्ण रूप से आज तक चल रही है और निश्चय ही इस महान परम्परा के अन्तर्गत कबीर, दादू एवं अखा का महत्वपूर्ण स्थान है। उनके साहित्य का हम सही मूल्यांकन तभी कर सकते हैं जब जगत में चली आ रही सदियों पुरानी परम्परा को समझने का प्रयास किया जाय । कबीर,दादू एवं अखा तीनों निरक्षर और निम्न जाति के थे।उन्हें शास्त्रों के अध्ययन का अवसर नहीं मिला था, फिर भी वे वेद,उपनिषद,ब्राह्मण–ग्रन्थों ,पुराणों आदि पौराणिक ग्रन्थों एवं संतों के अध्यात्म सम्बन्धी विचारों से पर्याप्त समानता मिलती है । इस वैचारिक समानता को देखकर हिन्दी के कुछ विद्वानों ने इन्हें वैष्णव,सूफी, बौद्ध,आदि मतावलम्बियों से प्रभावित माना है। किन्तु यह उचित नहीं है , क्योंकि परमात्मा एक अनन्त ,निश्चल तथा अविनाशी है । उसे पाने का रास्ता भी सबके लिये समान है , और जो भी उसे प्राप्त करेगा समान प्रकार के अनुभव होंगे । किसी भी काल ,देश, एवं स्थान में जब भी किसी को परमात्मा मिलेगा तो एक जैसा ही अनुभव होगा । वैचारिक साम्यता का मूल कारण यही है ।

संसार के अधिकांश धर्म मूलरूप से आध्यात्मिक और आन्तरिक अनुभव पर आधारित हैं।आध्यात्मिक अनुभव या प्रत्यक्ष आन्तरिक ज्ञान सब धर्मों का प्राण है।सब धर्म एक ही आध्यात्मिक विचारधारा की शाखाओं के रुप में जुड़े हुए हैं। परन्तु समय के साथ हर धर्म में आत्मा को परमात्मा से जोड़कर सत्य का साक्षात्कार करने वाले संत,महात्मा लुप्त हो गये। और उनके साथ ही आन्तरिक अनुभव प्राप्त करने वाली असली आध्यात्मिक साधना का भी गुप्त हो गयी , और धर्म का रुप खोखला हो गया ।

कबीर , दादू एवं अखा आदि संतों के आने से सच्ची धार्मिक भावना फिर से उभरीं । इन संतो के आने से पहले लोग सच्ची धार्मिकता को भूलकर निर्जीव कर्मकाण्ड और बुरे रीति –रिवाजों में फंस चुके थे।

संतों के साहित्य का अवलोकन करने से एक बात यह परिलक्षित होती है कि उन्होंने मनुष्य जन्म को परमात्मा का वरदान समझा । परमात्मा न केवल मनुष्य शरीर में विराजमान है , वल्कि वह प्रकट भी इस शरीर के अन्दर होता है । इस प्रकार मनुष्य योनि को दोहरी महिमा मिली है क्योंकि मनुष्य शरीर में परमात्मा बैठा हुआ है। इसी में वह प्राप्त होता है।

इसलिए कबीर,दादू एवं अखा आदि संतों का जीवन के प्रति अपना एक अलग दृष्टिकोण होता था। वे सच्ची आध्यात्मिक प्राप्ति को सांसारिक जरूरतें पूरी करने या दुनियावी दुःखों से छुटकारा पाने से कहीं अधिक जरूरी समझते है।संत लोगों को आध्यात्मिकता का रास्ता दिखाने में सबसे बड़ा परोपकार और सबसे ऊँची सेवा मानते हैं।समाज सुधारकों और संतों के सोचने में बुनियादी अन्तर यह है कि पदार्थवादी यह मानकर चलते हैं कि संसार को काफी हद तक सुखों की नगरी बनाया जा सकता है और समाज सुधार की सैकड़ों योजनाएँ लागू की जा सकती हैं जिससे संसार की दशा सुधर जाय।परन्तु कबीर,दादू एवं अखा यह मान कर चलते थे कि दुःख संसार के मूल में है।इस दुःख का मूल कारण जीवों का परमेश्वर से बिछोह है।जब तक जीव परमेश्वर से अलग हस्ती बनाए हुए है, उसके दुःखों का भी अन्त नहीं हो सकता।केवल परमेश्वर में लीन होने से ही जीव इस दुःखों से अन्त पा सकता है।इसीलिए महात्मा कबीर ने संसार को धुँए के महल के समान क्षणिक कहा है–

कबीर हरि की भगति बिन , ध्रिग जीमण संसार।
धुँआँ केरा फौलहर, जात न लागै बार ।।6

दादूजी कहते है संसार दुःखों का घर है सिर्फ परमात्मा ही सुख का सागर है , और उन्होंने इस जगत को हमेशा के रहने का स्थान नही माना है –

1:– कबीर ग्रंथावली, चितावनी–27, संपादक– श्यामसुंदर दास, काशी, नागरी प्रचारिणी सभा

(दादू) करै साई की चाकरी, ये हरी नॉंव न छोड़ि ।
जाणा है उस देस कौं, प्रीति पिया सौं जोड़ि ।। 1

अखा जी ने भी ईश्वर प्राप्ति को ही अन्य सांसारिक बातों से श्रेष्ठ माना है–

रामनाम ल्यो ओळखी, जो अवसर पाम्यो आज;
ए वणपाम्ये ठाला जशो , तो अखा शी रहेशे लाज? 2

पश्चिमी देशों के कई आलोचको ने भारत के सन्तों – महात्माओं पर खास तौर से यह आक्षेप किया है कि वे ज़िन्दगी और इसके आवश्यक कर्तव्यों से दूर भागने के दोषी है। लेकिन संतों की विचारघारा ऐसी नहीं है। उन्होंने कभी ब्रह्मचर्य घारण करने और संसार छोड़कर सन्यास लेने का उपदेश नहीं दिया है। गृहस्थ में रहते हुए भी मनुष्य को शील और विवेक के साथ जीवन बिताना चाहिए तथा गुरू के उपदेश पर चलना चाहिए–

सत सील दाया सहित, बरते जग ब्यौहार।
गुरु साध का आश्रित, दीन, वचन उच्चार।।
जो मानुष गृहधर्म युत, राखै सील विचार।
गुरुमुख बानी साधु संग, मन वच सेवा सार।।3

कबीर , दादू आदि सन्तों नें अपने मार्ग को मघ्यमार्ग कहा है । यह न वैराग्य का मार्ग है न भोगों में उलझनें का, न त्याग का मार्ग है , न संग्रह का , न संसार से भागने का मार्ग है , न संसार में लीन होने का । कबीर जी एक साखी में इस मार्ग का इशारा देते हुए कहते हैं –

अति का भला न बोलना , अति की भली न चूप ।
अति का भला न बरसना , अति की भली न धूप ।। 4

1 – दादू दयाल की बानी , भाग –1 , चितावनी –13 , बेल्बेडेयर प्रेस इलाहावाद द्वारा प्रकाशित ,सन् 1984

2– अखानी काव्य कृतिओ , खंड –2 , साखी , पीछ अंग , साखी –1 पृ0 165 , संपादक – डॉ0 शिवदयाल जेसलपुरा , स्वाति प्रेस अहमदावाद –7 द्वारा प्रकाशित, सन् 1988

3:– कबीर साखी संग्रह, पृ0 129 , 3 व 1

4:– कबीर साखी संग्रह, पृ0 76

साधक के लिए संसार त्याग और भोग दोनों ही प्रकार का जीवन हानिप्रद है। संसार त्याग में मन को बलपूर्वक दबाने का प्रयास किया जाता है, जबकि भोग में उसे खुली छूट दे दी जाती है।सन्तों ने इस मार्ग को सहज मार्ग भी कहा है। यह इन्द्रियों के दमन, काया –क्लेश आदि हठ –कर्मों का मार्ग नहीं है। यह नाम के अभ्यास द्वारा सहज रीति से मन को संसार की ओर से धीरे – धीरे हटाने का मार्ग है। कबीर कहते हैं –

सहजै सहजै सब गये सुत वित कांमणि कांम ।
एकमेक ह्वै मिलि रह्या, दास कबीरा राम ।। 1

अन्य स्थान पर कबीर जी कहते है –

सन्तों, सहज समाधि भली ।
ऑख न मूँदूँ कान न रुँधूँ, काया कष्ट न धारुँ ।
खुले नैन मैं हँस हँस देखूँ, सुन्दर रुप निहारुँ ।।
कहूँ सो नाम सुनूँ सो सुमिरन, जो कुछ करुँ सो पूजा ।
गिरह – उद्याम एक सम देखूँ, भाव मिटाऊँ दूजा ।।
जहँ जहँ जाऊँ सोई परिक्रमा, जो कुछ करूँ सो सेवा ।
जब सोऊँ तब करूँ दण्डवत, पूजूँ और न देवा ।।
सुख –दुख के इक परे परम सुख, तेहि में रहा समाई ।। 2

दादू दयाल भी सहजावस्था का वर्णन करते हुए कहते हैं –

सहजै संगि परसी जग जीवन, आसणि अमर अकेला ।
सुन्दरि जाइ सेज सुख सोवै, ब्रह्म जीव का मेला ।। 3

---

1 – कबीर ग्रन्थावली, सहज –3, संपादक –श्याम सुन्दर दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

2 – कबीर, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, संपादित, कबीर वाणी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पॉचवा संस्करण –1987

3 – दादू दयाल की बानी, भाग –2, राग रामकली, साखी –2, बेल्बेडेयर प्रेस इलाहावाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984

सहजै संगि परसी जग जीवन , आसणि अमर अकेला ।

सुन्दरि जाइ सेज सुख सोवै , ब्रह्म जीव का मेला ।। 1

* * *

(दादू) सबद अनाहद हम सुन्या , नख सिख सकल सरीर ।

सब घटि हरि हरि होत है , सहज ही मन थीर ।। 2

* * *

सरोवर राम जल ,माहै संजय सार ।

दादू सहजै सब गये, मन कै मैल बिकार ।। 3

अखा जी का भी कथन है –

सहेजे मळे संयोग , जीव नाम तेहनुं धर्यु । 4

कबीर इस भाव को और स्पष्ट करते हुए कहते है कि जो लोग नाम के प्रेमी और अभ्यासी होते हैं, वे ऐसी अवस्था प्राप्त कर लेते हैं कि अपने शरीर से संसार के काम काज करते हैं, लेकिन उनका घ्यान शरीर से परे नाम में लगा रहता हैं –

जो जन बिरही नाम के, तिन की गति है येह ।

देही से उद्यम करै, सुमिरन करैं बिदेह ।। 5

सन्त दादू इसी भाव को प्रकट करते हुए कहते हैं कि जो प्राणी घर और वन को एक समान समझते हुए गृहस्थ अवस्था में रहते हैं वे ही सच्चे सन्त हैं ।

---

1 – दादू दयाल की बानी , भाग –2 , राग रामकली , साखी –2 , बेल्बेडेयर प्रेस इलाहावाद द्वारा प्रकाशित ,सन् 1984

2 – वही , भाग –1 परचा –174

3 – वही , सुमिरन –60

4 – अखानी काव्य कृतिओ , खंड –2 , सोरठा –96 , , संपादक – डॉ0 शिवदयाल जेसलपुरा , स्वाति प्रिटिंग प्रेस अहमदावाद , 1988

5 – कबीर साखी संग्रह , पृ0 40 –57

दादू जिनि प्राणी करि जाणियां , धर बन एक समान ।

धर मांहै बन ल्यूं रहै, सोई साध सुजान ।। 1

अखाजी भी धर में ही (गृहस्थी में ही) ब्रह्मपद प्राप्ति होने की बात कही हैं ।

अखा विचाार विना अंधार, जो समझे तो धर मांहां पार । 2

गुरु नानक देवजी भी कहते हैं कि मनुष्य को संसार में कमल के समान रहना चाहिए। जिस प्रकार जल–मुर्गाबी पानी में रहती है, पानी में खाती पीती है, परन्तु जब उड़ती है तो सूखे परों के साथ। इसी प्रकार मनुष्य को चाहिए कि संसार में रहते हुए अपनी आत्मा को शब्द के साथ जोड़कर भवसागर को पार कर लें.

जैसे जल महि कमलु निरालमु , मुरगाई नैसाणे ।।

सुरति सबहि भवसागर तरीए नानक नामु वखाणे ।। 3

विश्व के रचयिता ने इस सृष्टि की जिस उद्देश्य से रचना की है, उसी रचना में समन्वय स्थापित करते हुए सांसारिक जीवन–यापन उन्होंने आवश्यक बताया । ' समत्व योग उच्चते ' । यह गीता का परमात्मा की प्राप्ति के लक्ष्य को संपन्न करने का प्रधानसूत्र रहा है । यही सिध्धांत संत परंपरा में संमिलित है ।

आध्यात्म जैसे अतिगहन विषय के संबंध में किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले प्राचीन शास्त्रों की गुरु परंपरा जिसके द्वारा यह आध्यात्म ज्ञान हजारो वर्षों सें अस्खलित प्रवाह की तरह बहता आ रहा है, उसमें गोता लगाये बगैर हम कुछ समझ सकते नहीं है।

अथर्ववेद के मन्त्रभाग मुण्डकोपनिषद के प्रारंभ में आध्यात्म विद्या को आचार्य परंपरा (गुरु परंपरा) दी गयी हैं। वहाँ बतलाया गया है कि यह विद्या ब्रह्मा जी से अथर्वा को प्राप्त हुई और अथर्वा से क्रमशः श्रृंगी और भारद्वाज के द्वारा अंगिरा को प्राप्त हुई । अंगिरा मुनि के पास शौनक नामके गृहस्थ ने पूछा

18 – दादू दयाल , पृ0 195 –33

19 – छप्पा – 19 सूभु अंश , छपा – 129

20 – आदि ग्रन्थ , पृ0 938

"कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिह विज्ञानं भवतीति" ।। 1 अर्थात् भगवन किस के जान लिये जाने पर सब कुछ जान लिया जाता है ?

गीता में भी ऐसी ही प्राचीन गुरु परंपरा का उल्लेख भगवान श्रीकृष्णजी ने किया है–

इमं विवस्वते योगं प्रोत्मवानहमव्ययम् ।

विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ।। 2

कठोपनिषद में भी इसी प्रकार गुरू शिष्य को इस अतिगुहय ज्ञान का उपदेश देते हैं ।

उतष्ठित जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत ।। 3

कोई ऐसा इतिहास नहीं मिलता जिसमें आध्यात्मिक प्रगति गुरु के बिना किसी को प्राप्त हुई हो। गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं कि परमात्मा का धुर से यही हुक्म है कि बिना सतगुरु के चेता नहीं जा सकता :

धुरि खसमै का हुकम पइआ विणु सतिगुरू चेतिआ न जाइ ।। 4

कबीर , दादू, अखा आदि सन्तो ने अपनी बानियों में सदगुरु की अपार महिमा का वर्णन किया है। सन्तों के अनुसार गुरु को ही अण्ड–ब्रह्माण्ड और उसके परे सचखण्ड तक का पुरा अनुभव है इसलिये वे गुरू को ही सच्चा मार्गदर्शक, सच्चा मित्र, और परमेश्वर का रूप ही मानते हैं। जो ज्ञान करोड़ो वर्षो तक भी धर्म – पुस्तकों को पढ़ने, विचार करनें और उनकी पूजा करने से नहीं हो सकता वह किसी आत्मदर्शी पुरुष से बहुत ही कम समय में प्राप्त हो सकता है। **"Spirituality cannot be taught but caught."** सन्तों की शिक्षा प्राप्त नहीं होती परन्तु अन्तर में प्रकट होती है। उसको केवल जानना ही नहीं, उसको देखना है, अनुभव करना है।

---

1 – मुण्डकोपनिषद , 1–3 ,11

2 – गीता , 4–1

3 – कठोपनिषद , 1–14

4 – आदि ग्रन्थ , बिहागड़ा , वार , महल्ला – 3 , पृ0 556

सन्तों ने किसी प्रचलित दार्शनिक परम्परा का आधार लेकर साधना नहीं की। उनकी काव्य धारा का दार्शनिक आधार गुरू परंपरा है ऐसा कहना अधिक उचित रहेगा। इस मार्ग में उन्होंने कोइ एक ब्रह्मवेत्ता गुरु को आधार बनाकर उनके बताए मार्ग पर साधना की और उसके फलस्वरूप जो आध्यात्मिक उप्लब्धियाँ हुऐं वही उनका दर्शन था। गुरु के चरणामृत के सिवाय और कहीं से उन्होंने कुछ भी नहीं लिया। यही उसका तार्मिक उत्तर है।

अधिकतर आधुनिक विद्वानोंने कबीर, दादू, अखा आदि संतों की आलोचना की है कि उन्हें दर्शन शास्त्र न्याय आदि सिद्धांत ग्रंथों का ज्ञान नहीं था, इसलिये वे मूर्ति–पूजा, तीर्थयात्रा और शास्त्रों के पठन–पाठन के महत्व को न समझ सके। परन्तु सन्त पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर प्रभु के सीधे सम्पर्क को कहीं, अधिक महत्व देते हैं। उनके अनुसार बुद्धि , तर्क और पुस्तकों से प्राप्त ज्ञान केवल बाहरी ज्ञान है, और मन व बुद्धि से परे की बातों से अनजान है। सच्चा ज्ञान उस एक परमात्मा का अनुभव है। सन्त समझते है कि अगर उस एक परमात्मा का ज्ञान नहीं हुआ तो बहुत प्रकार के ज्ञान प्राप्त कर लेने का क्या अर्थ है। उस एक को जानने से सब प्राप्त हो जायेगा, परन्तु मन बुद्धि के समस्त ज्ञान का संचय कर लेने पर भी मनुष्य उस एक प्रभु का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। बाहरी ज्ञान आध्यात्मिक ज्ञान में विशेष सहायक नहीं हो सकता। वे मन को सहज अवस्था में नहीं पहुँचा सकता।

सन्तों के मार्ग में आने वाले को ज्ञान के भार को हटाना पडता है, तभी वह सरल मन और अहंकार रहित बुद्धि के साथ प्रभु की भक्ति कर सकता हैं। सन्तों का मार्ग आन्तरिक अनुभव का मार्ग है, पढ़ने लिखने का नहीं, भकित का मार्ग है, सोचविचार का नहीं, प्रेम का मार्ग है, तर्क का नहीं। परमात्मा ने अपना ज्ञान केवल विद्धानों तक सीमित नहीं रखा है। मुण्डकोपनिषद में ठीक ही लिखा है –

यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष ,
आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम् ।। 1

1, – मुण्डक , तृतीय मुण्डक , द्वितीय खण्ड , श्लोक –3

जो मनुष्य परमात्मा की प्राप्ति की इच्छा करता है उसे उसकी इच्छा के कारण ही इसकी प्राप्ति हो सकती हैं। यहाँ साधक की इच्छा महत्वपूर्ण है, न कि विद्धता।

सन्तमत का दर्शन, चिंतन और साधना का स्त्रोत वेद, उपनिषद एवं गीता से बहता चला आ रहा है। विभिन्न् कालखण्डों में बहता हुआ यह स्त्रोत सन्तमत का दर्शन और साधना का प्रमुख आधार रहा है। अति प्राचीन समय से चली आ रही इस चिंतन धारा में विभिन्न् कालखण्डों का प्रभाव अवश्य हुआ है, भाषाऐं बदल गयी है, स्थान बदल गये है, कुछ बाहरी आचार–विचार बदल गये है, किन्तु चिंतन और साधना में कभी कुछ परिवर्तन लम्बें हज़ारो वर्षो की कालाविधि में भी नहीं हुए है। इसका कारण यही है कि सत्य सनातन होता है, कुछ सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक और धार्मिक परिवर्तनों के कारण उस सनातन सत्य पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता।

इस समग्र स्थिति का निष्कर्ष यह है कि कबीर, दादू एवं अखा पर स्वतंत्र रूप से कार्य अवश्य हुए है परन्तु कबीर, दादू एवं अखा पर कोई तुलनात्मक शोध–प्रबंध अभी तक प्रस्तुत नहीं हुआ था।

विद्यार्थी काल कें मैनें संत–साहित्य का कुछ अध्ययन किया था। किन्तु मेरे परिवार की राधास्वामी संतमत के प्रति आस्था के कारण में संतमत के विशाल साहित्य के संपर्क में आई, और इससे कबीर, दादू दयाल एवं अखा जैसे संतों के दार्शनिक विषय को सच्चे स्वरूप में समझने के लिए मेरे लिए एक नई दिशा खुल गई। हिन्दी विषय में एम.ए. करने के पश्चात मैंने इसी क्षेत्र में शोध–प्रबंध प्रस्तुत करनेका निश्चय किया।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध में कबीर, दादू एवं अखा की साखियों का आध्यात्म परंपरा के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। तीनों संतों की जाति, रचनाऍं, जीवनी एवं काव्य सौन्दर्य इत्यादि के विषय में अध्ययन प्रमुख लक्ष्य नहीं रहा, किंतु वैचारिक साम्य एवं उनकी रचनाओं में निहित संदेश को प्रतिपादित करना ही प्रमुख रहा है।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध कबीर, दादू, दयाल एवं अखा की साखियों का तुलनात्मक अध्ययन 6 परिच्छदों में विभाजित है। प्रथम परिच्छेद में पृष्ठभूमि एवं परिचय का सन्निवेश किया गया है। कबीर, दादू एवं अखा के पूर्ववर्ती संतों, महंतों की विचारधारा एवं उनकी मान्यताओं का उल्लेख किया गया है।

द्वितीय परिच्छेद अ,ब,स,द नाम से चार खण्डों में विभाजित है। 'अ' खण्ड के क विभाग के अन्तर्गत कबीर के समय की राजनैतिक स्थितियों का निरूपण किया गया है। इसी प्रकार 'अ' खण्ड के ख विभाग के अन्तर्गत कबीर के समय का समाज एवं सामाजिक मान्यताओं का चित्रण किया गया है।

इसी प्रकार 'अ' खण्ड के ग विभाग के अन्तर्गत कबीर के समय की धार्मिक स्थितियों पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय परिच्छेद के ही ब खण्ड के क विभाग के अन्तर्गत दादू दयाल के समय की राजनैतिक स्थितियों का निरुपण किया गया है। इसी परिच्छेद में खण्ड (ब) के ख विभाग के अन्तर्गत दादू के समय की सामाजिक परिस्थितियों, सामाजिक मान्यताओं एवं तत्कालीन समाज की मनोदशाओं का निरूपण किया गया है। इसी खण्ड (ब) के ग विभाग के अन्तर्गत दादू के समय की धार्मिक परिस्थितियों का निरूपण किया गया है।

इसी द्वितीय परिच्छेद के खण्ड (स) के क विभाग के अन्तर्गत अखा के समय की राजनैतिक स्थितियों का आकलन किया गया है। खण्ड (स) के ख विभाग के अन्तर्गत अखा के समय की सामाजिक स्थितियों, सामाजिक मान्यताओं का निरूपण किया गया है। खण्ड (स) के ग विभाग के अन्तर्गत अखा के समय की धार्मिक स्थितियों का निरूपण किया गया है।

इसी परिच्छेद के खण्ड 'द' के क विभाग के अन्तर्गत कबीर, दादू एवं अखा के समय की राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक स्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। खण्ड 'द' के ख विभाग के अन्तर्गत कबीर का जीवन परिचय, जाति, गुरु एवं रचनाओं पर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। खण्ड

'द' के ग विभाग के अन्तर्गत दादू के संक्षिप्त जीवन, जाति, गुरु एवं रचनाओं पर प्रकाश डाला गया है। खण्ड 'द' के घ विभाग के अन्तर्गत अखा के संक्षिप्त जीवन, जाति, गुरु एवं रचनाओं पर प्रकाश डाला गया है।

तृतीय परिच्छेद के अन्तर्गत कबीर, दादू, एवं अखा के ब्रहम, जीव, जगत एवं माया विषयक विचारों को व्यवस्थित ढ़ंग ये प्रस्तुत किया गया है। इसी परिच्छेद में ब्रहम, जीव, जगत और माया को अ,ब,स,द आदि चार विभागों में बॉटां गया है।

चतुर्थ परिच्छेद में आध्यात्म पक्ष का निरूपण किया गया है। चतुर्थ परिच्छेद का अ,ब,स,द,च,र,ल,व,प,फ आदि विभागों में बॉटां गया है। अ विभाग में सुरत शब्द योग का निरूपण किया गया है तो ब विभाग के अन्तर्गत सुमिरन, स के अन्तर्गत ध्यान , द के अन्तर्गत धुन, य के अन्तर्गत गुरू, र के अन्तर्गत सत्संग, ल के अन्तर्गत भक्ति, व के अन्तर्गत मृत्यु विषयक अवधारणा और प के अन्तर्गत मनुष्य जन्म की सर्वोच्चता पर विचार किया गया है। फ के अन्तर्गत कर्मकाण्ड की निरर्थकता पर विचार किया गया है ।

पंचम परिच्छेद के अन्तर्गत 'अ' विभाग में कबीर,दादू एवं अखा की साखियों पर विचार किया गया है। 'ब' विभाग के अंतर्गत उनके काव्य प्रयोजन पर प्रकाश डाला गया है। 'द' विभाग के अन्तर्गत भाषा शैली का निरूपण किया गया है। ' य' विभाग के अन्तर्गत उलटबॉसी पर प्रकाश डाला है।

षष्ठ परिच्छेद के अन्तर्गत उपसंहार की योजना हुई है। उपसंहार शीर्षक के अन्तर्गत इस अध्ययन की उपलब्धियॉ, आलोच्य कवियों की विचारधारा का महत्व आदि का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

अन्त में परिशिष्ट के अन्तर्गत सहायक ग्रंथो की सूची दी गयी है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस अध्ययन का उद्देश्य कबीर , दादू ,अखा आदि पूर्ण संतों की महानता एवं उनकी अद्‌भुत आध्यात्यमिक प्राप्ति को उजागर करना है । इस अध्ययन से यह सत्य दृढ़ होगा कि कबीर , दादू एवं अखा निश्चय ही संसार के परम संतों में से एक हैं । उनका जीवन और उपदेश एक प्रकाश – स्तम्भ है ,जो जिवों की अज्ञानता एवं मोह के अन्धकार को नष्ट करता है । उन्होंने संसार के

तप्त जीवात्माओं को अपनी आध्यात्यमिक ज्ञान की पियूष वर्षा से अनुप्लावित कर दिया है । उनकी वाणी आध्यात्यमिक ज्ञान का अथाह सागर है ।

अन्त में मैं पूज्य गुरुवर डॉ0 रमणलाल पाठक (निवृत अध्यक्ष , म. स. वि0 वड़ौदा) के प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मुझे इस विषय से अवगत कराया । हिन्दी विभागाध्यक्ष पुज्य गुरूवर डॉ0 प्रताप नारायन झा की भी मैं विशेष रुप से आभारी हूँ , जिन्होंने हमें समय – समय पर मार्ग दर्शन देकर नये – नये तथ्यों से अवगत कराया । संस्कृत महाविद्यालय के साहित्य शास्त्र के प्राध्यापक डॉ0 हरि प्रसाद पाण्डेय के निर्देशन में इस शोध कार्य का श्रेय जो हमें मिला , उनके प्रति भी अपना आभार व्यक्त करती हूँ हिन्दी विभाग के वरिष्ट प्राध्यापकों डॉ0 प्रेंम लता बाफना, डॉ0 विष्णु विराट चतुर्वेदी का भी पूर्ण रूप से आभरी हूँ । डॉ0 अम्बाशंकर नागर , डॉ0 मदन गोपाल गुप्त की मैं आभारी हूँ , जिन्होंने मुझे शोध के महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया । केन्द्रिय हिन्दी संस्थान ,आगरा के रीडर डॉ. मुहब्बत सिंह चौहान की भी मैं विशेष रुप से आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से सहायता प्रदान की ।

इस शोध –ग्रन्थ में हिन्दी एवं गुजराती के जिन विद्वानों के ग्रन्थों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष उपयोग किया गया है , उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना मेरा कर्तव्य है ।